

## "बहिरंग एवं अंतरंग योग की सामाजिक उपादेयता महर्षि पतञ्जलियोगसूत्र के सन्दर्भ में"

उमा रानी

शोधच्छात्रा, संस्कृत - विभाग

बी. एस. एम. पी. जी. कॉलेज रुड़की

डॉ. सुनीता कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत - विभाग

बी. एस. एम. पी. जी. कॉलेज रुड़की

### प्रस्तावना –

यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार ये पाँच अंग बहिरंग योग कहे जाते हैं उसी प्रकार धारणा, ध्यान, समाधि को अंतरंग योग के अंग माने जाते हैं। योग मनुष्य की चेतना के विकास का विज्ञान है। इसमें जीवन और चेतना का संयोग होता है। यह विज्ञान एवं अध्यात्म का बोध भी कराता है। उपनिषदीय परम्परा में योग चेतना की एक उच्च अवस्था है, इसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियों तथा मन की प्रवृत्तियाँ रूक जाती हैं और बुद्धि भी एक प्रकार से स्थिर हो जाती है। इसी प्रकार इन्द्रियनियन्त्रण से ध्यान स्थिर हो जाता है। वह विद्या सृष्टि के आदि काल से लेकर वर्तमान काल तक अविच्छिन्न एवं प्रगतिपूर्वक सम्पूर्ण गति से संसार को स्तन कर चली आ रही है। ऋषि द्वारा रचित योग परम्परा एक उच्च कोटि का विज्ञान है। यह महर्षि पतञ्जलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग की प्रारम्भ की पाँच सीढ़ियाँ हैं। जिसका पालन योग साधक को एक के बाद एक क्रमानुसार करके अपने शारीरिक व मानसिक अभ्यास के द्वारा साधना करके मनुष्य अपने जीवन को साधता है। अंतरंग योग में सम्पूर्ण रूप से प्रवीणता (कुशलता) पाने में अष्टांग योग के अनुसार बहिरंग योग साधना के पाँचों अंगों को साधक को बड़ी ही निपुणता के साथ प्राप्त करना अत्यंत आवश्यक होता है। क्योंकि योग साधक बहिरंग योग के बिना आगे के अंतरंगयोग को साधने में विफलता को व्यक्त कराते हैं। जिसके परिणाम योग साधक को अपने चरम लक्ष्य धारणा, ध्यान, समाधि (अंतरंग योग) को सिद्ध करने में वञ्चित रह जाते हैं तथा मोक्ष की प्राप्ति से दूर ही रह जाते हैं। इसलिए मनुष्य को बहिरंग योग के एक-एक चरणों को क्रमानुसार से करते हुए अपने जीवन में व्यवहारिकता के साथ तालमेल बिठाकर साधक को अपने अन्दर के शारीरिक, मानसिक रूप से नियमपूर्वक पालन करते हैं और इसे अपना परम ध्येय समझते हैं।

अष्टांग योग की पद्धति में प्रथम पाँच अंगों को बहिरंग योग साधना के अंग माने हैं और अन्तिम तीन चरणों को धारणा, ध्यान, समाधि को योग के अंतरंग योग साधना के अंग माने गये हैं- इन्हें अंतरंग इसलिए भी कहते हैं, क्योंकि योग के लक्ष्य तक जाने के लिए धारणादि के अतिशय के समीप होते हैं। यम-नियम आदि के भाग तो धारणादि तक पहुँचने में चित्त की एकाग्रता व शुद्धि करने में साधक के सहयोगी होते हैं।

बहिरंग योग में प्रथम और द्वितीय साधन यम-नियम में ही शामिल होने के फलस्वरूप इन्हें योग साधना का आरम्भ द्वार भी माना जाता है जिसके कारण बहिरंग चित्त को अविध्या क्लेशों की शुद्धि कर तथा साधक को योग के अनुकूल बनाने में उपयोगी है। इससे चित्त को स्वच्छता प्रदान की जाती है। इसीलिए सूत्रकार ने कहा भी है कि चित्तवृत्तियों के निरोध को ही योग कहा जाता है। बहिरंग एवं अंतरंग योग महर्षि पतञ्जलि ने योग के सभी मार्गों व साधनों को मिलाकर एक योग साधना पद्धति का निर्माण किया है। जिसके अन्तर्गत सभी योग मार्ग समाहित हैं। महर्षि पतञ्जलि ने अष्टांग योग साधना का निर्माण किया, जिसमें कर्म, भक्ति, ज्ञान और राजयोग पूर्णरूप से शामिल हैं। कुछ विद्वान तो अष्टांग योग में भक्तियोग, कर्मयोग, ज्ञानयोग व राजयोग को समाहित करते हैं कुछ का कहना है कि अष्टांग योग मार्ग ही राजयोग है। जैसे- यम-नियम का पालन कर्मयोग में आता है। ईश्वर-प्रणिधान प्रत्यक्ष रूप से भक्ति योग है। स्वाध्याय, ज्ञानयोग है और समाधि को तो राजयोग ही कहा जाता है। यमनियमप्रणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाध्यावङ्गानि। यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि। यह योग के आठ अंग हैं, इन आठों अंगों में पहले पाँच को बहिरंग साधन कहते हैं। क्योंकि उनका विशेष सम्बन्ध बाहर की होने वाली क्रियाओं से होता है और जो शेष तीन अंग धारणा, ध्यान, समाधि हैं, वो अंतरंग हैं। इनका सम्बन्ध केवल अन्तःकरण (अन्दर) से होने के कारण इन्हें अंतरंग कहा जाता है। महर्षि पतञ्जलि ने एक साथ होने के कारण इन तीनों को संयम भी कहा है- त्रयमेकत्रसंयमः।

महर्षि पतञ्जलि ने अष्टांग योग को दो भागों में बाँटा है, जिसमें 1. बहिरंग योग 2. अंतरंग योग।



**बहिरंग योग साधन –**

यम ।

नियम ।

आसन ।

प्राणायाम ।

प्रत्याहार ।

**यमः अहिंसा सत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहायमाः ।** अर्थात् अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह ये पाँचों यम कहलाते हैं –

1. **अहिंसा** – मन, वाणी और शरीर से किसी प्राणी को कभी किसी प्रकार का थोड़ा भी दुखन देना अहिंसा है ।
2. **सत्य**- अन्तःकरण और इन्द्रियों द्वारा जैसा निश्चय किया गया हो, हित की भावना कपटहितशब्दों में ठीक वैसा का वैसा ही भाव प्रकट करने का नाम सत्य है।
3. **अस्तेय** - मन वाणी शरीर के द्वारा किसी भी प्रकार की वस्तु को न चुराना, न लेना, न ही छीनना अस्तेय है। इसमें घूसखोरी भी सम्मिलित है।
4. **ब्रह्मचर्य** - मन इन्द्रियों और शरीर द्वारा होने वाले कम-विकार के सर्वथा अभाव का नाम ब्रह्मचर्य है।
5. **अपरिग्रह**- स्पर्श रूप रस गन्ध किसी भी धन सम्पत्ति का भोग सामग्री का संचय करना परिग्रह है। इसके अभाव का नाम अपरिग्रह है। **अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्ता सम्बोध ।**

अपरिग्रह के स्थिर होने पर विषय लोक पदार्थों के संग्रह का भली-भाँति त्याग कर देने पर वैराग्य और उपरति होनामन का संयम कहलाता है, मन के संयम से भूत भविष्य, वर्तमान जन्मों का व उनके सभी कारणों का ज्ञान हो जाता करता है। इन पाँचों यमों की सभी जाति देश व काल में पालन होने से निम्न प्रकार से इनके विपरीत हिंसादि दोषों के घटने से इनकी गिनती सार्वभौमिक महावृत्तों में की जाती है। कहा भी गया है। जैसे जाति देश **काल समयानवच्छिन्नाः सार्वभौममहावृत्तम्** - अहिंसा का अनुष्ठान सार्वभौम अर्थात् जाति, देश, (योगसूत्र 2/31) काल व निमित्त से अविच्छिन्न यम का सार्वभौमिक पालन महावृत्त होता है। जो सबके साथ सब जगह सब समय समान भाव से किया जाता है। जैसे किसी ने नियम लिया कि मुँगे के सिवा अन्य किसी भी जीव की हिंसा नहीं करूँगा यह जाति अवच्छिन्न अहिंसा है— उसीप्रकार वर्ष, मास, पक्ष, सप्ताह, दिवस, मुहूर्त, नक्षत्र एवं पर्व आदि के भेदों से यम के पालन में किसी प्रकार का भेद न करना कालगत सार्वभौम महावृत्त है। समयानुगत विवाह के अवसर के अलावा अन्य किसी निमित्त से हिंसा नहीं करूँगा। क्रय-विक्रय आजीविका आदि के भेदों से यम के पालन में किसी प्रकार का भेद न करना समयानुगत सार्वभौम महावृत्त इसी प्रकार अभिप्राय ये है कि किसी देश अथवा काल में किसी जीव के साथ किसी भी प्रकार के निमित्त से हिंसा, असत्य, चोरी आदि का आचरण न करना परिग्रह आदि न रखना ही सार्वभौम महावृत्त है।

**(2) नियमः शौच संतोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधाननियमाः ।** शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर – प्रणिधानये पाँच नियम कहलाते हैं।

**1- शौच :-** जल मृत्तिकादि के माध्यम से शरीर की शुद्धि व वस्त्र तथा मकान आदि की साफ सफाई नियमित रूप से करना बाहरी शुद्धि कहलाती है तथा दृव्य से प्राप्त सात्विक पदार्थों का पवित्रता पूर्वक सेवन करना। ये सभी इसी के अन्तर्गत आते हैं। अपना हित, ममता, ईर्ष्या भय व काम क्रोधादि भीतरी दुर्गुणों के त्याग से अन्तःकरण के रागद्वेष आदि दोषों का नाश करना भीतरी पवित्रता कहलाती है।

**2. सन्तोष - संतोषादनुत्तम सुखलाभः ।** सन्तोष से उत्तम दूसरा कोई सुख नहीं। सन्तोष नाम सन्तुष्टि कहलाता है। जिस अवस्था और परिस्थिति में भी रहे और उसी की स्थिति में संतोष प्राप्त हो जाए। उसी में सन्तुष्ट रहना तथा किसी भी प्रकार की अत्याधिक पाने की इच्छा का अभाव ही सन्तोष कहलाता है।

**3. तप :- कायेन्द्रिय सिद्धिरक्षयात्तपसः ।**

पापों का नाश हो जाने पर अणियदि आठ कार्य की सिद्धियाँ प्राप्त हो जाना। अपने वर्ण, आश्रम परिस्थिति व योग्यता के अनुसार स्वयं धर्म का पालन करना तथा उसके पालन में जो शारीरिक व मानसिक अधिक से अधिक कष्ट प्राप्त हो उसे सहन करना ही तप कहलाता है। जैसे- गर्मी, भूख, प्यास, आलस आदि।

**4. स्वाध्यायः - स्वाध्यायदिष्ट देवता सम्प्रयोग ।**

कल्याण के लिए शास्त्रों का अध्ययन व इष्ट देवता के नाम का जप तथा खोता आदि के पठन-पाठन एवं गुणों का अनुवाद करने का नाम ही स्वाध्याय कहलाता है। वेद शास्त्र, उपनिषद एवं आध्यात्म ज्ञान उत्पन्न करने वाले शास्त्रों का पठन-पाठन मनन करना शास्त्रों में निन्दनीय कर्मों का त्याग करना व गायत्री आदि मन्त्रों का जाप करना स्वाध्याय कहलाता है।

**5. ईश्वर-प्रणिधान समाधि सिद्धरीश्वर प्रणिधानात् ।** ईश्वर प्रणिधान से समाधि की सिद्धि हो जाती है। ईश्वर की उपासना या भक्ति विशेष को ईश्वर प्रणिधान कहते हैं। परमेश्वर के निमित्त अर्पित कर देना ही ईश्वर प्रणिधान है। शरीर इन्द्रियाँ, मन अन्तःकरण प्राण एवं उनसे होने वाले कर्मों तथा उनके परिणामों को बाह्य और

Copyright to IJAR SCT

[www.ijarsct.co.in](http://www.ijarsct.co.in)



DOI: 10.48175/IJAR SCT-37847



438

अभ्यान्तर जीवन को भगवान के चरणों में समर्पण कर देना ईश्वर के विशेष भावना सहित मानसिक जाप करना ईश्वर प्रणिधान उपासना के अन्दर ही है। यह सब अंग तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान योग के अष्टांग मार्गों में सम्मिलित हैं। यही क्रियायोग भी कहलाता है। ईश्वर प्रणिधान से ही समाधि की सिद्धि होती है। ईश्वर-प्रणिधान से ईश्वर की अनुकम्पा होती है। उसी अनुभव से सभी अनिष्ट दूर हो जाते हैं। तप योग सिद्धि से नहीं होता है अपितु शीघ्र ही योगी सिद्धि को प्राप्त कर लेता है।

### (3) आसन (स्थिरसुखमासनम्) -

आसन शब्द संस्कृत भाषा के अस् धातु से निष्पन्न होता है। आसन शब्द के दो अर्थ होते हैं। जिसमें (1) बैठने का स्थान। (2) शारीरिक अवस्था। आसन अनेकों प्रकार के होते हैं। उसमें आत्मसंयम चाहने वाले मनुष्य के लिए सिद्धासन, पद्ममासन, स्वास्तिकासन आदि तीनों ही उपयोगी माने हैं। कोई भी आसन हो लेकिन करते समय मेरुदण्ड मस्तक व ग्रीवा को सीधा रखे जिस आसन में मनुष्य सूखपूर्वक अधिक समय तक बैठे वहीं उसके लिए उत्तम आसन है।

### 4. प्राणायाम :- तस्मिन् सति श्वास प्रश्वास योर्मति विच्छेदः प्राणायामः ।

आसन की सिद्धि होने के बाद श्वास प्रश्वास की गति का रूक जाना प्राणायाम है। प्राणायाम दो शब्दों से बनता है जैसे प्राण जीवन शक्ति आयात नियन्त्रण या विस्तार।

### 5. प्रत्याहार - स्वविषया सम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः ।

प्राणायाम के बाद प्रत्याहार का विवेचन व उसकी उपयोगिता की दृष्टि से क्रिया है। प्रत्याहार का अर्थ-पीछे हटना उल्टा होना, विषयों से विमुख होना इन्द्रियां अपने बहिर्मुख विषयों से अलग होकर अन्तर्मुख हो जाती है। इन्द्रियों के संयम को भी प्रत्याहार कहते हैं।

अंतरंग योग -

1. धारणा
2. ध्यान
3. समाधि

अष्टांग योग में अंतरंग योग का छठा भाग धारणा है जो निम्न है।

### 6. धारणा: देशबन्धश्चित्तस्य धारणा ।

मन (चित्त) को एक स्थान पर स्थिर व लगाना ही धारणा है। चित्त को किसी एक देश में स्थिर करना ही धारणा है। स्थूल-सूक्ष्म या बाह्य आभ्यान्तर किसी एक ध्येय स्थान में चित्त को बाधना किसी एक देश में ठहरा देना या लगा देना धारणा कहलाता है।

### 7. ध्यान:- तत्रप्रत्ययैकतानता ध्यानम् ।

धारणा से ध्येय को साधक किसी वृत्ति का लगातार चलना ध्यान कहलाता है। चित्त वृत्ति एक धारा प्रवाह की भाँति जल की धारा जैसे एक अविच्छिन्न रूप से निरन्तर अपनी ध्येय वस्तु में ही लगातार एकाग्रता से लगा रहना ही ध्यान है।

### 8. समाधि :- तदेवार्थमात्र निर्मासं स्वरूप शून्यमिव समाधिः ॥

जब केवल ध्येयमात्र की ही प्रतीति होती है। चित्त का निज स्वरूप शून्य सा हो जाता है तब वही ध्यान ही समाधि कहलाता है। ध्यान ही समाधि हो जाता है। ध्येय मात्र की प्रतीति होती है और ध्येय स्वरूप का ही भाव होता है। अपने स्वरूप के भाव का अभाव सा रहता है। ध्यान करते करते जब मनुष्य का चित्त ध्येयाकार को प्राप्त होता है। वह स्वयं भी ध्येय में तन्मय सा बन जाता है। ध्येय से भिन्न होकर अपने आपका भी ज्ञान उसे नहीं रहता है उसी स्थिति का नाम समाधि है। अर्थात् ध्याता, ध्यान, ध्येय इन तीनों की एकता सी हो जाती है। योगशास्त्र में समाधि को मोक्ष प्राप्ति का मुख्य साधन बताया गया है इसलिए योग समाधि पतञ्जलियोगसूत्र में चित्त की वृत्तियों के निरोध को ही योग कहा है। (योगश्चित्तवृत्ति निरोधः) समस्त चित्त वृत्ति समाधि में निरुद्ध हो जाती है। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अन्य ग्रन्थों में अंतरंग को परिभाषित करते हुए निम्नप्रकार प्रस्तुत किया है, घेरण्ड संहिता में ध्यान के तीन प्रकार बताए गए हैं -

### 1. स्थूल ध्यान-स्थूलं ज्योतिस्तथा सूक्ष्म ध्यानस्य त्रिविधं विदुः ।

अर्थात् - हृदय या सहस्रार चक्र में गुरुया इष्टदेव के वाहन, आभूषण सहित ध्यान को स्थूल ध्यान कहा गया है।

### 2. ज्योतिर्ध्यान-स्थूल मूर्तिमयं प्रोक्तं ज्योतिस्तेजोमयं तथा।

अर्थात् मूलाधार में आत्मा का निवास है। वहाँ तेजोमय ब्रह्म का ध्यान किया जाता है। भ्रमध्य में प्रकाश के रूप में प्रणव की स्थिति मानी गई है, ध्यान करना ज्योतिर्ध्यान कहलाता है। इसी को प्रणव ध्यान भी कहते हैं।



### 3. सूक्ष्म ध्यान – सूक्ष्म विन्दुमयं ब्रह्म कुण्डली पर देवता ।

(अर्थात् शाम्भवी मुद्रा में कुण्डलिनी शक्ति के ध्यान को सूक्ष्म ध्यान कहा जाता है।

समाधि को परिभाषित करते हुये घरेण्ड संहिता में समाधि के छह भेद किये गये हैं।

1. ध्यान योग समाधि - शाम्भवी मुद्रा से यह सिद्ध होती है।

2. नाद योग समाधि- भ्रामरी प्राणायाम के अभ्यास द्वारा सिद्ध होती है।

3. रसानन्द योग समाधि- खेचरी मुद्रा के अभ्यास से सिद्ध की जाती है।

4. लयसिद्धि योग समाधि -यह योनि मुद्रा से सिद्ध की जाती है।

5. भक्ति योग समाधि - अनन्य श्रद्धा व अनन्य प्रेम से यह समाधि प्राप्त की जाती है।

6. राजयोग - मन के नियन्त्रण से सिद्ध होती है।

इस प्रकार से साधनभूत अंगों का विवेचन प्रस्तुत करके घरेण्ड ऋषि ने अपने उद्देश्य से मुक्ति

के लक्ष्य को प्राप्त किया है। इसी प्रकार से सांख्य दर्शन में भी योग को परिभाषित करते समय

लिखा गया है कि सांख्यदर्शन राग से दूर ले जाने वाला ध्यान है। वृत्तियों के निरोध से लिखा गया है कि सांख्यदर्शन राग से दूर ले जाने वाला ध्यान है। वृत्तियों के निरोध से ध्यान की सिद्धि होती है धारणा, आसन तथा ध्यान की सिद्धि होती है। धारणा, आसन तथा अन्य स्वकीय कर्मों अर्थात् अन्य साधनों से वृत्तिनिरोध (ध्यान) की सिद्धि की सिद्धि होती है। वृत्तिनिरोध में प्राणायाम की उपयोगिता है। स्थिरतापूर्वक सुख का अनुभव करना आसन है। सांख्य दर्शन के अनुसार ध्यान के लिए रजोगुण का दमन आवश्यक है क्योंकि वही चित्त को चलायमान रखता है। जब मन में तमस और रजस् गुणों पर सत्वगुण का अधिकार हो जाता है तो ध्यानमुक्त हो जाता है। इसके लिये चित्त की वृत्तियों का निरोध किया जाता है। सत्वगुण बढ़ने के साथ चित्तवृत्तियों का निरोध होता जाता है। इसके लिए वैराग्य और विवेक की आवश्यकता होती है। सांख्यदर्शन में देह को पृथ्वी, जल अग्नि प्रकाश और वायु इन पंचतत्त्वों से निर्मित माना जाता है। इसमें पृथ्वी तत्व प्रधान है। आत्मादेह से भिन्न है। आत्मा स्वयं साध्य है जबकि देह उसका साधन है। सांख्य भारतीय विचारधारा तथा योगदर्शन की परम्परा का पालन करता है।

**सामाजिक उपादेयता-** इस बात में किसी प्रकार का कोई सन्देह नहीं है कि मनुष्य को स्वस्थ रखने में योग का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि यह तो हम सब को पता है कि एक स्वस्थ नागरिक से ही एक स्वस्थ परिवार का निर्माण होता है तथा एक स्वस्थ व संस्कारी परिवार से ही एक आदर्श समाज की स्थापना होती है। इसलिए समाज के कल्याण में योग अभ्यास का सीधा प्रभाव देखने को मिलता है। समाज की गतिविधियां अभ्यास आज के इस प्रतिस्पर्धा व टेक्नालॉजी के इस दौरमें व्यक्ति विशेष पर सामाजिक गतिविधियों का नकारात्मक प्रभाव अधिक पड़ रहा है। मनुष्य धन कमाने की लालसा में व विलसिता के साधनों को जुटाने के लिए किसी भी हद तक जा सकता है। जिसके लिए हिंसक, आतंकी, अविश्वास व भ्रष्टाचार की दुनिया में बिना किसी हिचकिचाहट के निर्भर होकर उस प्रवृत्ति को अपना रहा है। ऐसे यौगिक अभ्यास जैसे कर्मयोग, हठयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, अष्टांग योग आदि। साधन से समाज को नयी रचनात्मक व शान्तिहठयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, अष्टांग योग आदि। साधन से समाज को नयी रचनात्मक व शान्ति दायक वातावरण देकर नई – नई दिशाप्रदान करें कर्मयोग का सिद्धान्त तो पूर्ण सामाजिकता का ही आधार माना है। सभी सुखी हो सभी निरोगी हो इसे प्रेरणा व उद्देश्य के साथ योग समाज में अपनी धारणा व नयी दिशा दिखा रहा है जो कि आज के युग में अति महत्वपूर्ण भी है। इन विभिन्न बातों को ध्यान में रखते हुये विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं में किस प्रकार ऐसा समन्वय हो सकता है कि ऐसा धरातल मिल सके जिस पर योगकी भित्ति खड़ी की जा सके यह बड़ा रोचक प्रश्न है। परन्तु इसके विवेचन के लिए बहुत समय चाहिए यहां उस प्रक्रिया पर थोड़ा सा विचार कर लेना आवश्यक है। जिसकी रूपरेखा हम को पतंजलि के सूत्रों में मिलती है। यह सभी समुदायों के लिए मान्य भी है जो योग अभ्यास का समर्थन करते हैं और योग के मार्ग पर चलने को तत्पर हैं। वर्तमान युग में योग - आधुनिक काल में योग साधना के इस पुण्य परम्परा को श्रीरामकृष्ण परमहंस एवं उनके शिष्य समुदाय में अग्रणी स्वामी विवेकानन्द ने विश्वधर्म सम्मेलन शिकागो से (1893) से शुरू की इसी परम्परा में श्री अरविन्द महर्षि रमण स्वामी दयानन्द स्वामी योगानन्द स्वामी शिवानन्द स्वामी, चिन्मयानन्द आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखित हैं। इन्हीं देव मानवी ने इस प्रवाह को आगे बढ़ाया बीसवीं सदी में स्वामीकुवलयानन्द व महायोगी युग ऋषि प० आचार्य श्रीरामशर्मा ने वैदिक युग से लेकर अब तक प्रचलित साधना पद्धतियों को अपने जीवन की प्रयोगशाला में दशकों की साधना से खरा प्रमाणित किया साथ ही उन्होंने उनकी युगानुकूल वैज्ञानिक व्याख्या भी की अपने साधनामय जीवन में महाप्रयोग का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए उन्होंने बताया है कि मानवीय जीवन के सभी प्रश्नों का सार्थक हल योग साधना में निहित है। इतना ही नहीं 21 वीं सदी की चुनौतियों का सामना युग के अनिवार्यता को स्वीकार कर ही किया जा सकता है।

### निष्कर्ष

संक्षेप में आशय यह है कि योग के शास्त्रीय स्वरूप व उसके दार्शनिक आधार को सम्यक् रूप से समझना बहुत सरल नहीं है। संसार को मिथ्या मानने वाला अद्वैतवादी भी निदिध्यासन के नाम से उसका समर्थन करता है। अनीश्वरवादी सांख्य विद्वान् भी उसका अनुमोदन

करने से पीछे नहीं हटते हैं। बौद्ध ही नहीं मुस्लिम सूफी व ईसाई भी किसी न किसी प्रकार से इस सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों के साथ अपना सामाज्य स्थापित कर रहे हैं। महर्षि पतञ्जलि ने जहाँ भक्तियोग, कर्मयोग के भाव प्रधान साधकों के लिए एक उत्तम साधन योग साधना को माना है। जीवनशैली की अति



आवश्यक पद्धति योग को माना गया है। जिसके लिए वहीं दूसरी ओर अष्टांग योग का प्रतिपादन किया है। भक्ति योग में साधक ईश्वर के प्रति प्रेमभाव को रखकर अपने अभीष्ट की प्राप्ति करता है। वही साधक नवधा भक्ति रागात्मिका भक्ति या उच्च अवस्था की पराभक्ति का सहारा लेता है। इसी प्रकार से अष्टांग योग में साधक बहिरंग एवं अन्तरंग साधनों का उपयोग करते हुए आठ (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि) को प्रयोग कर मोक्ष (केवल्य) की प्राप्ति करता है। साधना चाहे जो भी हो लेकिन अन्तिम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है।

**सन्दर्भग्रन्थ सूची –**

1. महर्षि पातंजल योगदर्शन - 2/29
2. पातंजल योगसूत्र - 2/39
3. पातंजल योगसूत्र- 2/31
4. पातंजल योगसूत्र- 2/32
5. पातंजल योगसूत्र- 2/42
6. पातंजल योगसूत्र- 2/43
7. पातंजल योगसूत्र- 2/44
8. पातंजल योगसूत्र- 2/45
9. पातंजल योगसूत्र- 2/46
10. पातंजल योगसूत्र - 2/49
13. पातंजल योगसूत्र 3/3
14. पातंजल योगसूत्र 2/54
15. घरेण्ड संहिता 6/2
16. सांख्य दर्शन

